2 नमक का दारोगा

प्रेमचंद

(जन्म : सन् 1880, मृत्यु : सन् 1936 ई.)

प्रेमचन्द का जन्म वाराणसी (उ.प्र.) के निकट लमही नामक गाँव में हुआ था। जीवन संघर्ष में जूझते हुए वे एक स्कूल अध्यापक से ऊपर उठकर स्कूलों के सब - इन्स्पेक्टर पद पर भी आसीन हुए थे। वे कुछ समय तक काशी विद्यापीठ में भी अध्यापक रहे। उन्होंने कई साहित्यिक पत्रों का सम्पादन किया जिनमें 'हंस' प्रमुख था। आत्म गौरव के साथ उन्होंने साहित्य के उच्च आदर्शों की रक्षा का प्रयत्न किया।

प्रेमचन्द के उपन्यास तथा कहानियाँ हिन्दी साहित्य की धरोहर हैं। 'गोदान', 'निर्मला', 'गबन', 'सेवासदन', 'कर्मभूमि', 'रंगभूमि' आदि उनके प्रमुख उपन्यास हैं तथा उनकी कहानियाँ 'मानसरोवर' के आठ भागों में संकलित हैं।

प्रस्तुत कहानी समाज की यथार्थ स्थिति को उद्घाटित करती है। मुंशी वंशीधर एक ईमानदार और कर्तव्यपरायण व्यक्ति हैं। पण्डित अलोपीदीन दातागंज के सबसे अधिक अमीर और इज्जतदार व्यक्ति थे। उन्होंने धन के बल पर सबको गुलाम बना रखा था। वह पैसे कमाने के लिए नियम विरुद्ध कार्य करता है। दारोगा वंशीधर उनकी नमक की गाड़ियाँ पकड़ लेता है। उनके प्रलोभन को वह ठुकराता है। उनको अदालत में ले जाता है, लेकिन वकील और प्रशासनिक अधिकारी ने उसे निर्दोष साबित कर दिया और वंशीधर को नौकरी से बेदखल कर दिया। अंत में पण्डित अलोपीदीन वंशीधर के घर जाकर माफी मांगते हैं और अपने कारोबार में स्थायी मैनेजर बना देते हैं। वंशीधर की ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा के आगे नतमस्तक हो जाते हैं।

जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वरदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया तो लोग चोरी छिपे इसका व्यापार करने लगे। अनेक प्रकार के छल-प्रपंचों का सूत्रपात हुआ, कोई घूस से काम निकालता था, कोई चालाकी से। अधिकारियों के पौ बारह थे। पटवारीगीरी का सर्वसम्मानित पद छोड़-छोड़ कर लोग इस विभाग की बरकन्दाजी करते थे। इसके दारोगा पद के लिए तो वकीलों का जी भी ललचता था। यह वह समय था जब अँगरेजी शिक्षा और ईसाई मत को लोग एक ही वस्तु समझते थे। फारसी का प्राबल्य था। प्रेम की कथाएँ और शृंगाररस के काव्य पढ़कर फारसीदाँ लोग सर्वोच्च पदों पर नियुक्त हो जाया करते थे। मुंशी वंशीधर भी जुलेखा की विरह-कथा समाप्त करके मजनू और फरहाद के प्रेम-वृत्तान्त को नल और नील की लड़ाई और अमेरिका के आविष्कार से अधिक महत्त्व की बातें समझते हुए रोजगार की खोज में निकले। उनके पिता एक अनुभवी पुरुष थे। समझाने लगे, ''बेटा! घर की दुर्दशा देख रहे हो। ऋण के बोझ से दबे हुए हैं। लड़कियाँ हैं, वह घास-फूस की तरह बढ़ती चली जाती हैं। मैं कगार पर का वृक्ष हो रहा हूँ, न मालूम कब गिर पड़ूँ। अब तुम्हीं घर के मालिक-मुख्तार हो। नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर का मजार है। निगाह, चढ़ावे और चादर पर रखना चाहिए। ऐसा काम ढूँढ़ना, जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है, जो एक दिन दिखायी देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है, जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है; इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसमें बरकत होती है। तुम स्वयं विद्वान हो, तुम्हें क्या समझाऊँ, इस विषय में विवेक की बड़ी आवश्यकता है। मनुष्य को देखो, उसकी आवश्यकता को देखो और अवसर देखो, उसके उपरान्त जो उचित समझो, करो। गरज वाले आदमी के साथ कठोरता करने में लाभ-ही-लाभ है। लेकिन बेगरज को दाँव पर पाना जरा कठिन है। इन बातों को निगाह में बाँध लो। यह मेरी जन्म भर की कमाई है।''

इस उपदेश के बाद पिताजी ने आशीर्वाद दिया । वंशीधर आज्ञाकारी पुत्र थे। ये बातें ध्यान से सुनीं और तब घर से चल खड़े हुए। इस विस्तृत संसार में उनके लिए धैर्य अपना मित्र, बुद्धि अपनी पथदर्शक और आत्मावलम्बन ही अपना सहायक था। लेकिन अच्छे शकुन से चले थे, जाते-ही-जाते नमक विभाग के दारोगा पद पर प्रतिष्ठित हो गये। वेतन अच्छा और ऊपरी आय का तो ठिकाना ही न था। वृद्ध मुंशीजी को सुख-संवाद मिला तो फूले न समाये। महाजन लोग कुछ नरम पड़े, कलवार की आशालता लहलहाई। पड़ोसियों के हृदय में शूल उठने लगे।

2

जाड़े के दिन थे और रात का समय। नमक के सिपाही, चौकीदार नशे में मस्त थे। मुंशी वंशीधर को यहाँ

आये अभी छः महीनों से अधिक न हुए थे, लेकिन इस समय में ही उन्होंने अपनी कार्य-कुशलता और उत्तम आचार से अफसरों को मोहित कर लिया था। अफसर लोग उन पर बहुत विश्वास करने लगे नमक के दफ्तर से एक मील पूर्व की ओर जमुना बहती थी, उस पर नावों का एक पुल बना हुआ था। दारोगाजी किवाड़ बन्द किये मीठी नींद सो रहे थे। अचानक आँख खुली तो नदी के प्रवाह की जगह गाड़ियों की गड़गड़ाहट तथा मल्लाहों का कोलाहल सुनाई दिया। उठ बैठे। इतनी रात गये गाड़ियाँ क्यों नदी के पार जाती हैं? अवश्य कुछ-न-कुछ गोलमाल है । तर्क ने भ्रम को पुष्ट किया। वरदी पहनी, तमंचा जेब में रखा और बात-की-बात में घोड़ा बढ़ाये हुए पुल पर आ पहुँचे। गाड़ियों की एक लम्बी कतार पुल के पार जाते देखी। डाँट कर पूछा, ''किसकी गाड़ियाँ हैं?''

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा। आदमियों में कुछ कानाफूसी हुई, तब आगे वाले ने कहा, ''पण्डित अलोपीदीन की।''

''कौन पण्डित अलोपीदीन?''

''दातागंज के।''

मुंशी वंशीधर चौंके। पण्डित अलोपीदीन इस इलाके के सबसे प्रतिष्ठित जमींदार थे। लाखों रुपये का लेन-देन करते थे। इधर छोटे से बड़े कौन ऐसे थे जो उनके ऋणी न हों। व्यापार भी बड़ा लम्बा-चौड़ा था। बड़े चलते-पुरजे आदमी थे। अंगरेज अफसर उनके इलाके में शिकार खेलने आते और उनके मेहमान होते। बारहों मास सदाव्रत चलता था।

मुंशीजी ने पूछा, 'गाड़ियाँ कहाँ जायेंगी ?' उत्तर मिला, 'कानपुर।' लेकिन इस प्रश्न पर कि इसमें है क्या, फिर सन्नाटा छा गया । दारोगा साहब का सन्देह और भी बढ़ा। कुछ देर तक उत्तर की बाट देख कर वह जोर से बोले, 'क्या तुम सब गूँगे हो गये हो? हम पूछते हैं, इनमें क्या लदा है?'

जब इस बार भी कोई उत्तर न मिला, तो उन्होंने घोड़े को गाड़ी से मिला कर बोरे को टटोला। भ्रम दूर हो गया। यह नमक के ढेले थे।

3

पण्डित अलोपीदीन अपने सजीले रथ पर सवार कुछ सोते कुछ जागते चले आते थे। अचानक कई गाड़ीवाले घबराये हुए आकर जगाया और बोले, 'महाराज! दारोगा ने गाड़ियाँ रोक दी हैं और घाट पर खड़े आपको बुलाते हैं।'

पण्डित अलोपीदीन का लक्ष्मीजी पर अखंड विश्वास था। वह कहा करते थे कि संसार का तो कहना ही क्या स्वर्ग में भी लक्ष्मी का ही राज्य है। उनका यह कहना यथार्थ ही था। न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं, इन्हें वह जैसे चाहती हैं नचाती हैं। लेटे-ही लेटे गर्व से बोले, 'चलो हम आते हैं।' यह कह कर पण्डितजी ने बड़ी निश्चिंतता से पान के बीड़े लगा कर खाये। फिर लिहाफ ओढ़े हुए दारोगा के पास आकर बोले, 'बाबूजी, आशीर्वाद! कहिये, हमसे ऐसा कौन-सा अपराध हुआ कि गाड़ियाँ रोक दी गई। हम ब्राह्मणों पर तो आपकी कृपा-दृष्टि रहनी चाहिए।'

वंशीधर रुखाई से बोले, 'सरकारी हुक्म!'

पं. अलोपीदीन ने हँसकर कहा, 'हम सरकारी हुक्म को नहीं जानते और न सरकार को। हमारे सरकार तो आप ही हैं। हमारा और आपका तो घर का मामला है, हम कभी आपसे बाहर हो सकते हैं? आपने व्यर्थ का कष्ट उठाया। यह हो नहीं सकता कि इधर से जाएँ और इस घाट के देवता को भेंट न चढ़ावे। मैं तो आपकी सेवा में स्वयं ही आ रहा था।' वंशीधर पर ऐश्वर्य की मोहिनी का कुछ प्रभाव न पड़ा। ईमानदारी की नयी उमंग थी। कड़क कर बोले, 'हम उन नमकहरामों में नहीं हैं, जो कौड़ियों पर अपना ईमान बेचते फिरते हैं। आप इस समय हिरासत में हैं। सबेरे आपका कायदे के अनुसार चालान होगा। बस, मुझे अधिक बातों की फुर्सत नहीं है। जमादार बदलू सिंह! तुम इन्हें हिरासत में ले चलो, मैं हुक्म देता हूँ।'

पं. अलोपीदीन स्तम्भित हो गये। गाड़ीवानों में हलचल मच गयी। पण्डितजी के जीवन में कदाचित् यह

पहला ही अवसर था कि पण्डितजी को ऐसी कठोर बातें सुननी पड़ीं। बदलू सिंह आगे बढ़ा, किन्तु रोब के मारे यह साहस न हुआ कि उनका हाथ पकड़ सके। पण्डितजी ने धर्म को धन का ऐसा निरादर करते कभी न देखा था। विचार किया कि यह अभी उद्दंड लड़का है। माया-मोह के जाल में अभी नहीं पड़ा। अल्हड़ है, झिझकता है। बहुत दीन-भाव से बोले, ''बाबू साहब, ऐसा न कीजिए, हम मिट जायेंगे ! इज्जत धूल में मिल जायगी। हमारा अपमान करने से आपके क्या हाथ आयेगा। हम किसी तरह आपसे बाहर थोड़े ही हैं!''

वंशीधर ने कठोर स्वर में कहा, ''हम ऐसी बातें नहीं सुनना चाहते हैं।''

अलोपीदीन ने जिस सहारे को चट्टान समझ रखा था, पैरों के नीचे खिसकता हुआ मालूम हुआ। स्वाभिमान और धन ऐश्वर्य को कड़ी चोट लगी। किन्तु अभी तक धन की सांख्यिक शक्ति का पूरा भरोसा था। अपने मुख्तार से बोले, ''लालाजी, एक हजार के नोट बाबू साहब को भेंट करो। आप इस समय भूखे सिंह हो रहे हैं।''

वंशीधर ने गरम होकर कहा, ''एक हजार नहीं, एक लाख भी मुझे सच्चे मार्ग से नहीं हटा सकते।''

धर्म की इस बुद्धिहीन दृढ़ता और देव-दुर्लभ त्याग पर मन बहुत झुँझलाया। अब दोनों शक्तियों में संग्राम होने लगा। धन ने उछल-उछलकर आक्रमण करने शुरू किए। एक से पाँच, पाँच से दस, दस से पन्द्रह और पन्द्रह से बीस हजार तक नौबत पहुँची, किन्तु धर्म अलौकिक वीरता के साथ इस बहुसंख्यक सेना के सम्मुख अकेला पर्वत की भाँति अटल, अविचलित खड़ा रहा था।

अलोपीदीन निराश होकर बोले, ''अब इससे अधिक मेरा साहस नहीं। आगे आपको अधिकार है।''

वंशीधर ने अपने जमादार को ललकारा। बदलू सिंह मन में दारोगाजी को गालियाँ देता हुआ पण्डित अलोपीदीन की ओर बढ़ा। पण्डितजी घबड़ाकर दो-तीन कदम पीछे हट गये। अत्यन्त दीनता से बोले, ''बाबू साहब, ईश्वर के लिये मुझ पर दया कीजिये, मैं पच्चीस हजार पर निपटारा करने को तैयार हूँ।''

''असम्भव बात है।''

''तीस हजार पर?''

''किसी तरह सम्भव नहीं।''

''क्या चालीस हजार पर भी नहीं?''

''चालीस हजार नहीं, चालीस लाख पर भी असम्भव है। बदलू सिंह इस आदमी को हिरासत में ले लो। अब मैं एक शब्द भी नहीं सुनना चाहता।''

धर्म ने धन को पैरों-तले कुचल डाला। अलोपीदीन ने एक हृष्ट-पुष्ट मनुष्य को हथकड़ियाँ लिये हुए अपनी तरफ आते देखा। चारों ओर निराशा और कातर दृष्टि से देखने लगे। इसके बाद यकायक मूर्छित होकर गिर पड़े।

4

दुनिया सोती थी, पर दुनिया की जीभ जागती थी। सबेरे ही देखिए तो बालक-वृद्ध सब के मुँह से यही बात सुनाई देती थी। जिसे देखिए वही पण्डितजी के इस व्यवहार पर टीका-टिप्पणी कर रहा था; निन्दा की बौछारें हो रही थीं; मानो संसार से अब पापी का पाप कट गया। पानी को दूध के नाम से बेचनेवाला ग्वाला, कल्पित रोजनामचे भरनेवाले अधिकारी वर्ग, रेल में बिना टिकट सफर करने वाले बाबू लोग, जाली दस्तावेज बनानेवाले सेठ और साहूकार, यह सब-के-सब देवताओं की भाँति गर्दनें चला रहे थे। जब दूसरे दिन पण्डित अलोपीदीन अभियुक्त होकर कांस्टेबलों के साथ, हाथों में हथकड़ियाँ, हृदय में ग्लानि और क्षोभ भरे, लज्जा से गर्दन झुकाए अदालत की तरफ चले तो सारे शहर में हलचल मच गयी। मेलों में कदाचित् आँखें इतनी व्यग्र न होंगी। भीड़ के मारे छत और दीवार में कोई भेद न रहा।

किन्तु अदालत में पहुँचने की देर थी। पण्डित अलोपीदीन इस अगाध वन के सिंह थे। अधिकारी-वर्ग उनके भक्त, अमले उनके सेवक, वकील-मुख्तार उनके आज्ञा-पालक और अरदली, चपरासी तथा चौकीदार तो उनके बिना मोल के गुलाम थे। उन्हें देखते ही लोग चारों तरफ से दौड़े। सभी लोग विस्मित हो रहे थे। इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया, बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आए। ऐसा मनुष्य जिसके पास असाध्य-साधन करने वाला धन और अनन्य वाचालता हो, क्यों वह कानून के पंजे में आवे। प्रत्येक मनुष्य उनसे सहानुभूति

प्रकट करता था। बड़ी तत्परता से इस आक्रमण को रोकने के निमित्त वकीलों की एक सेना तैयार की गई। न्याय के मैदान में धर्म और धन में युद्ध ठन गया। वंशीधर चुपचाप खड़े थे। उनके पास सत्य के सिवा न कोई बल था, न स्पष्ट-भाषण के अतिरिक्त कोई शस्त्र। गवाह थे, किन्तु लोभ से डावाँडोल।

यहाँ तक कि मुंशीजी को न्याय भी अपनी ओर से कुछ खिंचा हुआ दीख पड़ता था। वह न्याय का दरबार था, परन्तु उसके कर्मचारियों पर पक्षपात का नशा छाया हुआ था। किन्तु पक्षपात और न्याय का क्या मेल? जहाँ पक्षपात हो, वहाँ न्याय की कल्पना भी नहीं कही जा सकती। मुकद्दमा शीघ्र ही समाप्त हो गया। डिप्टी मैजिस्ट्रेट ने अपनी तजवीज में लिखा, पण्डित अलोपीदीन के विरुद्ध दिए गए प्रमाण निर्मूल और भ्रमात्मक हैं। वह एक बड़े भारी आदमी हैं। यह बात कल्पना से बाहर है कि उन्होंने थोड़े लाभ के लिए ऐसा दुस्साहस किया हो। यद्यपि नमक के दारोगा मुंशी वंशीधर का अधिक दोष नहीं है लेकिन यह बड़े खेद की बात है कि उनकी उद्दण्डता और विचारहीनता के कारण एक भलेमानुस को कष्ट झेलना पड़ा। हम प्रसन्न हैं कि वह अपने काम में सजग और सचेत रहता है, किन्तु नमक के महकमे की बढ़ी हुई नमकहलाली ने उसके विवेक और बुद्धि को भ्रष्ट कर दिया। भविष्य में उसे होशियार रहना चाहिए।

वकीलों ने यह फैसला सुना और उछल पड़े। पण्डित अलोपीदीन मुस्कुराते हुए बाहर निकले। स्वजन-बान्धवों ने रुपयों की लूट की! उदारता का सागर उमड़ पड़ा। उसकी लहरों ने अदालत की नींव तक हिला दी। जब वंशीधर बाहर निकले तो चारों ओर से उनके ऊपर व्यंग्य-बाणों की बर्षा होने लगी। चपरासियों ने झुक-झुक कर सलाम किये। किन्तु इस समय एक-एक कटु-वाक्य एक-एक संकेत उनकी गर्वाग्नि को प्रज्वलित कर रहा था। कदाचित इस मुकद्दमे में सफल होकर वह इस तरह अकड़ते हुए न चलते। आज उन्हें संसार का एक खेदजनक विचित्र अनुभव हुआ। न्याय और विद्वत्ता, लम्बी-चौड़ी उपाधियाँ, बड़ी-बड़ी दाढ़ियाँ और ढीले चोगे एक भी सच्चे आदर के पात्र नहीं हैं।

वंशीधर ने धन से वैर मोल लिया था। उसका मूल्य चुकाना अनिवार्य था। कठिनता से एक सप्ताह बीता होगा कि मुअत्तली का परवाना आ पहुँचा। कार्यपरायणता का दंड मिला। बेचारे भग्नहृदय, शोक-खेद से व्यथित घर को चले। बूढ़े मुंशीजी तो पहले ही से कुड़बुड़ा रहे थे कि चलते-चलते इस लड़के को समझाया था, लेकिन इसने एक न सुनी। बस मनमानी करता है। हम तो कलवार कसाई के तगादे सहें, बुढ़ापे में भगत बनकर बैठें और वहाँ बस वही सूखी तनख्वाह! हमने भी तो नौकरी की है और कोई ओहदेदार नहीं थे, लेकिन काम किया, दिल खोल कर किया और आप ईमानदार बनने चले हैं। घर में चाहे अन्धेरा, मस्जिद में अवश्य दीया जला देंगे। खेद है ऐसी समझ पर! पढ़ना-लिखना सब अकारथ गया। इसके थोड़े ही दिनों बाद, जब मुंशी वंशीधर इस दुरवस्था में घर पहुँचे और बूढ़े पिताजी ने यह समाचार सुना तो सिर पीट लिया। बोले, जी चाहता है कि तुम्हारा और अपना सिर फोड़ लूँ। बहुत देर तक पछता-पछता कर हाथ मलते रहे। क्रोध में कुछ कठोर बातें भी कहीं और यदि वंशीधर वहाँ से टल न जाते तो अवश्य ही यह क्रोध विकट रूप धारण करता। वृद्धा माता को भी दुख हुआ। जगन्नाथ और रामेश्वर यात्रा की कामनाएँ मिट्टी में मिल गयीं। पत्नी ने तो कई दिन तक सीधे मुँह से बात भी नहीं की।

इसी प्रकार एक सप्ताह बीत गया। सन्ध्या का समय था। बूढ़े मुंशीजी बैठे राम-नाम की माला जप रहे थे। इसी समय उनके द्वार पर एक सजा हुआ रथ आकर रुका। हरे और गुलाबी परदे, पछहियें बैलों की जोड़ी, उनकी गर्दनों में नीले धागे, सींगें पीतल से जड़ी हुईं। कई नौकर लाठियाँ कन्धों पर रखे साथ थे। मुंशीजी अगवानी को दौड़े। देखा तो पण्डित अलोपीदीन हैं। झुककर दंडवत् की और लल्लो-चप्पो की बातें करने लगे, ''हमारा भाग्य उदय हुआ, जो आपके चरण इस द्वार पर आये। आप हमारे पूज्य देवता हैं। आपको कौन-सा मुँह दिखावें मुँह में तो कालिख लगी हुई है। किन्तु क्या करें, लड़का अभागा कपूत है, नहीं तो आपसे क्यों मुँह छिपाना पड़ता? ईश्वर नि:सन्तान चाहे रक्खे, पर ऐसी सन्तान न दे।''

अलोपीदीन ने कहा - नहीं भाई साहब, ऐसा न कहिए।

मुंशीजी ने चकित होकर कहा - ऐसी सन्तान को और क्या कहूँ?

अलोपीदीन ने वात्सल्यपूर्ण स्वर में कहा! कुलतिलक और पुरुषों को कीर्ति उज्जवल करनेवाले संसार

में ऐसे कितने धर्मपरायण मनुष्य हैं, जो धर्म पर अपना सब कुछ अर्पण कर सकें?

पं. अलोपीदीन ने वंशीधर से कहा – 'दारोगाजी, यह खुशामद करने के लिए मुझे इतना कष्ट उठाने की जरूरत न थी। उस रात को आपने अपने अधिकार-बल से मुझे अपनी हिरासत में लिया था, किन्तु आज मैं स्वेच्छा से आपकी हिरासत में आया हूँ। मैंने हजारों रईस और अमीर देखे, हजारों उच्च पदाधिकारियों से काम पड़ा; किन्तु मुझे परास्त किया तो आपने। मैंने सबको अपना और अपने धन का गुलाम बना कर छोड़ दिया। मुझे आज्ञा दीजिए कि आपसे कुछ विनय करूँ।'

वंशीधर ने अलोपीदीन को आते देखा तो उठकर सत्कार किया, किन्तु स्वाभिमान सहित। समझ गये कि यह महाशय मुझे लज्जित करने और जलाने आये हैं। क्षमा-प्रार्थना की चेष्टा नहीं की, वरना उन्हें अपने पिता की यह ठकुरसुहाती की बात असह्य-सी प्रतीत हुई। पर पण्डितजी की बातें सुनीं, तो मन की मैल मिट गयी। पण्डितजी की ओर उड़ती हुई दृष्टि से देखा। सद्भाव झलक रहा था। गर्व ने अब लज्जा के सामने सिर झुका दिया। शर्माते हुए बोले, 'यह आपकी उदारता है जो ऐसा कहते हैं। मुझसे जो कुछ अविनय हुई है, उसे क्षमा कीजिए। मैं धर्म की बेड़ी में जकड़ा हुआ था, नहीं तो मैं आपका दास हूँ। जो आज्ञा होगी, वह मेरे सिर-माथे पर।'

अलोपीदीन ने विनीत भाव से कहा – 'नदी के तट पर आपने मेरी प्रार्थना नहीं स्वीकार की थी, किन्तु आज स्वीकार करनी पड़ेगी।'

वंशीधर बोले, – 'मैं किस योग्य हूँ किन्तु जो कुछ सेवा मुझसे हो सकती है उसमें त्रुटि न होगी।'

अलोपीदीन ने एक स्टाम्प लगा हुआ पत्र निकाला और उसे वंशीधर के सामने रखकर बोले – 'इस पद को स्वीकार कीजिए और अपने हस्ताक्षर कर दीजिए। मैं ब्राह्मण हूँ, जब तक यह सवाल पूरा न कीजिएगा, द्वार से न हटूँगा।'

मुंशी वंशीधर ने उस कागज को पढ़ा, तो कृतज्ञता से आँखों में आँसू भर आये। पण्डित अलोपीदीन ने उन्हें अपनी सारी जायदाद का स्थायी मैनेजर नियत किया था। छ हजार वार्षिक वेतन के अतिरिक्त रोजाना खर्च अलग, सवारी के लिए घोड़े, रहने को बँगला, नौकर-चाकर मुक्त। कल्पित स्वर से बोले – 'पण्डितजी, मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं है कि आपकी इस उदारता की प्रशंसा कर सकूँ! किन्तु मैं ऐसे उच्च पद के योग्य नहीं हूँ।

अलोपीदीन हँस कर बोले-मुझे इस समय एक अयोग्य मनुष्य की ही जरूरत है।'

वंशीधर ने गम्भीर भाव से कहा, यों मैं आपका दास हूँ। आप जैसे कीर्तिवान, सज्जन पुरुष की सेवा करना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। किन्तु मुझमें न विद्या है, न बुद्धि, न वह अनुभव जो इन त्रुटियों की पूर्ति कर देता है। ऐसे महान कार्य के लिए एक बड़े मर्मज्ञ अनुभवी मनुष्य की जरूरत है।

अलोपीदीन ने कलमदान से कलम निकाली और उसे वंशीधर के हाथ में देकर बोले, 'न मुझे विद्वत्ता की चाह है न अनुभव की, न मर्मज्ञता की, न कार्य-कुशलता की। इन गुणों के महत्त्व का परिचय खूब पा चुका हूँ। अब सौभाग्य और अवसर ने मुझे वह मोती दे दिया है, जिसके सामने योग्यता और विद्वत्ता की चमक फीकी पड़ जाती है। यह कलम लीजिए; अधिक सोच विचार मत कीजिए; दस्तखत कर दीजिए। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि आपको सदैव वही नदी के किनारे वाला, बेमुरौवत, उद्दण्ड, कठोर परन्तु धर्मनिष्ठ दारोगा बनाए रखे।''

वंशीधर की आँखें डबडबा आयीं। हृदय के संकुचित पात्र में इतना अहसान न समा सका। कई बार फिर पण्डितजी की ओर भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखा और काँपते हुए हाथ से मैनेजरी के कागज पर हस्ताक्षर कर दिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

ग्लानि लज्जा, क्षोभ **अगाध** अपार **वाचालता** वाक्छटा **शीघ्र** तत्काल **तजवीज** कार्यवाही **भ्रमात्मक** अस्पष्ट **कीर्ति** यश **कृतज्ञता** उपकार **मर्मज्ञ** मन की बात जानकर **ईश्वरदत्त** ईश्वर का दिया हुआ; प्राकृतिक **छल-प्रपंच** धोखाधड़ी **सूत्रपात** आरंभ, शुरुआत **पटवारीगीरी** पटवारी यानी लेखपाली का काम, गाँव की जमीन तथा उसके लगान का

हिसाब रखनेवाला सरकारी कर्मचारी पटवारी या लेखपाल होता है **बरकंदाजी** चौकीदारी, जी–हजूरी **प्राबल्य** प्रबलता, बोलबाला **फारसीदाँ** फारसी जाननेवाला **जुलेखाँ** एक प्रसिद्ध प्रेमकथा की नायिका **आविष्कार** किसी नई चीज की खोज **कगार** नदी का खड़ा किनारा **ओहदा** पद **वीर की मजार** पूजा की वस्तु **ऊपरी आय** रिश्वत **बरकत** वृद्धि, बढ़ना **गरज** जरूरत, लाचारी **बेगरज** जो लाचार न हो **शकुन** शुभ घड़ी **कलवार** पुराने समय में शराब बेचनेवाली एक जाति **गोलमाल** गड़बड़ **सन्नाटा** एकदम शांति **कानाफूसी** एक दूसरे के कान में फुसफुसा कर बात कहना **चलता–पुरजा** बहुत प्रभावशाली **सदाव्रत** गरीबों को मुफ्त में खाना खिलाना **सजीला** सजा हुआ **ऐश्वर्य** धन–दौलत **हिरासत** गिरफ्तारी **स्तंभित होना** चकित होना **रोब** प्रभाव, दबदबा, दबाव **उद्दंड** किसी की लिहाज या अदब न करनेवाला **झिझकना** संकोच करना **सांख्यिक शक्ति** संख्या का बल **मुख्तार** अधिकारी या कर्मचारी, **मूर्छित** बेहोश **रोजनामचा** रोज के क्रिया–कलाप, हिसाब आदि लिखने की किताब **अभियुक्त** आरोपी, जिस पर किसी अपराध का आरोप लगा हो **ग्लानि** अपने किसी अनुचित कार्य पर उत्पन्न खेद (दुख), पश्चाताप **अदालत** कचहरी **गहन वन** बहुत विस्तृत वन **विस्मित** आश्चर्यचकित **वाचालता** वाणी की चतुराई, वाणी की कुशलता **डाँवाडोल** अस्थिर, चंचल **तजवीज** फैसला, निर्णय **महकमा** सरकारी विभाग **नमकहलाली** वफादारी **मुअत्तली** बरखास्तगी, नौकरी से निकाला जाना **कुड़बुड़ाना** किसी नाराजगी की वजह से अंदर–अंदर कुढ़ना, दुखी होना **अकारथ** व्यर्थ **अगवानी** आगे बढ़कर किसी का स्वागत करना **वात्सल्यपूर्ण** आत्मीयतापूर्ण, अपनेपन के भाव से पूर्ण **कुलतिलक** वंश का गौरव **खुशामद** चापलूसी, जी–हजूरी **ठकुरसुहाती** किसी व्यक्ति को खुश करने के लिए कही जानेवाली अच्छी–अच्छी बातें, चापलूसी **त्रुटि** भूल, गलती **जायदाद** धन–संपत्ति, चल–अचल संपत्ति **मर्मज्ञ** कुशल, समझदार **कलमदान** कलम रखने का पात्र **बेमुरौवत** किसी की लिहाज न करनेवाला

मुहावरे

निगाह में बाँध लेना सदैव याद रखना **पौ बारह होना** लाभ ही लाभ होना **घास–फूस की तरह बढ़ना** बहुत तेजी से बढ़ना **हृदय में शूल उठना** हृदय या मन में बहुत पीड़ा होना **इज्जत धूल में मिलना** बहुत बेइज्जत होना **पैरों तले कुचल डालना** नष्ट कर देना, विजय पाना **टीका–टिप्पणी करना** निंदा करना **सिर पीटना** बहुत अधिक दुखी होना **सीधे मुँह से बात न करना** नाराजगी व्यक्त करना **लल्लो–चप्पो करना** खुशादम या चापलूसी करना **मुँह में कालिख लगना** अपमानित और कलंकित होना.

स्वाध्याय

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दिए गए विकल्पों में से चुनकर लिखिए :

(1) नमक विभाग के दरोगा पद पर किसकी नियुक्ति हुई थी?
(क) पण्डित अलोपीदीन (ख) वंशीधर
(ग) बदलू सिंह (घ) वृद्ध मुंशीजी

(2) नमक की गाड़ियाँ किसकी थी?
(क) मुन्शी वंशीधर की (ख) पण्डित जगप्रसाद की
(ग) पण्डित अलोपीदीन की (घ) बदलू सिंह

(3) पण्डित अलोपीदीन को किस पर अखंड विश्वास था?
(क) शिवजी पर (ख) रामजी पर (ग) लक्ष्मीजी पर (घ) हनुमानजी पर

(4) वंशीधर को पण्डित अलोपीदीन ने कौन–से पद पर नियुक्त किया?
(क) स्थायी मैनेजर (ख) दारोगा (ग) जज (घ) वकील

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए:

(1) वंशीधर किस विभाग के दारोगा थे?

(2) वंशीधर ने पुल पर क्या देखा?

(3) पण्डित अलोपीदीन को किसने हिरासत में लिया?

(4) मुकद्दमे में किसकी जीत हुई?

(5) वंशीधर की माता की कौन-सी कामना मिट्टी में मिल गई?

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दो-तीन वाक्यों में लिखिए:

(1) वृद्ध मुंशीजी क्यों फूले न समाये?

(2) वंशीधर रात को जमुना नदी पर क्यों गए?

(3) पण्डित अलोपीदीन को क्यों हिरासत में लिया गया?

(4) वंशीधर की अदालत में क्यों हार हुई?

4. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर पाँच-छ वाक्य में दीजिए:

(1) पण्डित अलोपीदीन के व्यक्तित्व का परिचय दीजिए।

(2) पण्डित अलोपीदीन ने वंसीधर को जायदाद का स्थायी मैनेजर क्यों नियुक्त किया?

5. आशय स्पष्ट कीजिए:।

(1) न्याय और नीति सब लक्ष्मी के ही खिलौने हैं।

(2) धर्म ने धन को पैरों तले कुचल डाला।

6. निम्नलिखित कथनों की पूर्ति के लिए दिए गये विकल्पों में से उचित विकल्प चुनकर वाक्य पूर्ण कीजिए।

(1) वंशीधर के अनुभवी पिता ने कहा....

(क) ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है। इसी से बरकत होती है।

(ख) वेतन सरकार देती है और ऊपरी आमदनी धनवान देते हैं।

(ग) ऊपरी आमदनी कभी मत लेना।

(घ) वेतन के साथ ऊपरी आमदनी भी लेना।

(2) पण्डित आलोपीदीन को वंशीधर उत्तर देता है - ......

(क) पैसे से निपटारा हो जाएगा।

(ख) चालीस हजार नहीं, चालीस लाख पर भी असम्भव है।

(ग) पचास हजार तक सम्भव है।

(घ) ईश्वर के लिए मुझे माफ कर दीजिए।

(3) पं. अलोपीदीन हंसकर बोले......

(क) ऐसी सन्तान को और क्या कहूँ?

(ख) हमारा भाग्य हुआ।

(ग) मुझे इस समय एक अयोग्य मनुष्य की ही जरूरत है।

(घ) मैं आपका दास हूँ।

योग्यता-विस्तार

(1) विद्यार्थी प्रवृत्तिः 'भ्रष्टाचारः एक समस्या'' विषय पर निबंध लिखिए।

(2) शिक्षक प्रवृत्तिः प्रेमचन्द की कहानी 'पंच परमेश्वर' का सारांश कहिए।

⊙